Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies,
Online ISSN 2278-8808, SJIF 2021 = 7.380, www.srjis.com
PEER REVIEWED & REFEREED JOURNAL, MAR-APR, 2022, VOL- 9/70

शोध आलेख : समकालीन हिन्दी कविता में राजनीतिक व्यंग्य

नीतू गोस्वामी, Ph. D.

उत्तराखण्ड

Paper Received On: 25 APR 2022
Peer Reviewed On: 30 APR 2022
Published On: 1 MAY 2022

Scholarly Research Journal's is licensed Based on a work at www.srjis.com

साहित्य से राजनीति के सम्बन्ध को कला के लिए बाधक मानने वाले विद्वानों का मत है कि कालाकार के लिए राजनैतिक प्रेरणा कलात्मक प्रेरणा नहीं है। यदि हम इतिहास के पन्नों को पलटें तो पायेंगे कि हर युग में कविता और राजनीति ने एक–दूसरे को समयानुसार प्रेरित और प्रभावित किया हैं यह प्रभाव कभी प्रत्यक्ष रूप में दिखाई देता है तो कभी अप्रत्यक्ष में। कवि की पीड़ा समाज की पीड़ा होती हैं इसीलिए चाहे अनचाहे उसका राजनीति से सीधा सम्पर्क हो जाता है। वस्तुतः राजनीति का प्रभाव जीवन के हर क्षेत्र में पड़ता है। ऐसी अवस्था में कवि जैसे सजग प्राणी का राजनीति से अछूता रहना संभव नहीं है। इस विशय की उद्धाटन करते हुए मुक्तिबोध कहते हैं– 'यह कहना बिलकुल गलत है कि कलाकार के लिए राजनैतिक प्रेरणा कलात्मक प्रेरणा नहीं है, अथवा विशुद्ध दार्शनिक अनुभूति कलात्मक अनुभूति नहीं है–बशर्ते की वह सच्ची वास्तविक, अनुभूति हो, छद्‌मजाल न हो। यह बिल्कुल सही है कि कलाकार की प्रकृति राजनीतिक या दार्शनिक प्रकृति नहीं है। वह राजनीतिक क्षेत्र में भी जिन आदर्शो को लेकर जाता है वे आदर्श हृदय के अपरिसीम विस्तार के आवश से सम्बद्ध होने के कारण उस कलाकार के लिए तो कलात्मक ही है।[1] वस्तुतः आज का साहित्यकार राजनीति को कला के लिए बाधक नहीं मानता है क्योंकि वह राजनीति में प्रवीण होने और उससे फायदा उठाने के लिए राजनीति में प्रवीण होने और उससे फायदा उठाने के लिए राजनीति पर कविता नहीं लिखता है बल्कि वह वहाँ मानव जीवन के उन्नयन के लिए संभावनाएं ढूंढता है तथा दिशा परिवर्तन में संलग्न होता है।

आज का कवि राश्ट्रीय व अन्तराश्ट्रीय राजनीति में गहरी दिलचस्पी रखता है और स्वयं को एक राजनीतिक के रूप में जागरूक नागरिक के रूप में प्रस्तुत करता है। सन् साठ के आसपास से हिन्दी कविता में राजनीतिक विद्रोह और राजनीतिक घटनाओं की सीधे–सीधे अभिव्यक्ति होने लगी। सातवें और आठवें दशक की कविताओं में राजनीतिक व्यंग्य तो मिलता ही है, राजनीति के पीछे छिपी हुई तमाम कारगुजारियों का कच्चा चिट्‌ठा भी मिलता हैं सातवें और आठवें द ाक की कविताओं में गैर

Copyright © 2022, Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies

राजनीतिक कविताएं भी देखने को मिलती है, जैसे इस युग में पर्यावरण की समस्या को शिद्दत के साथ महसूस किया गया है और उसे कविता में स्थान दिया गया, आठवें दशक की कविताओं में नागरिकों के मूल अधिकारों के हनन पर चिंता व्यक्त की गयी है तथा आर्थिक मांगों को लेकर हुए आन्दोलनों के पक्ष में दलितों के आन्दोलन का स्पश्ट प्रभाव समकालीन कविता पर पड़ा है। समकालीन कविता में साक्षरता, स्वास्थ्य, पोशण, पेयजल भुद्धि, गरीबी, बेरोजगारी जैसी समस्याओं को उठाया गया है और कहीं न कहीं से राजनीतिक हल तलाशने की कोशिश की गयी है।

आजादी के बाद भारतीय समाज में चतुर्मुखी परिवर्तन की जो प्रक्रिया आरम्भ हुई, उसने समकालीन कविता को आन्दोलित किया। सामाजिक यथार्थ और राजनीतिक परिदृ य, कविता की समकालीनता के अनिवार्य तत्व बनाये हैं। इस कविता में राजनीतिक दबावों को स्वीकार किया गया है तथा राजनीतिक के अनैतिक, अमानवीय, क्रूर एवं आतंकवादी चरित्र को उजागर किया गया है। इसके साथ ही समकालीन कविता राजनीति के सामने आ खड़ी हुई है। यह कविता सामरिक स्तर पर राजनीति से मुठभेड़ करती है, जिसमें कवि की तीखी प्रतिक्रियाएं भाामिल हैं– 'कई बार राजनीति अखबारी कतरनों के रूप में आती हैं जहाँ ढ़ेर सारी सूचनाएं होती हैं पर उसे कविता बनाने के लिए कवि की सजग संवेदनशील दृश्टि चाहिए। मुक्तिबोध, रघुवीर सहाय, भूमिल आदि कवि राजनीति के भीतर से जो संसार उभारते हैं वहाँ आंकड़े या घटनाएं दृश्यों में बदल जाते हैं...यह अकारण नहीं है कि राजनीति कविता की समकालीनता की एक प्रमुख इकाई है प्रश्न केवल यह है कि वह कविता की बुनावट से कितना घुलमिल कर आयी है। कवियों में एक गहरे आक्रोश विद्रोह का भाव राजनीति के बारे में तीखी टिप्पणियाँ करता है, उसकी मुद्रा आक्रामक है और वह मारक व्यंग्य का सहारा लेता है।[2]

वस्तुतः समकालीन कविता और राजनीति का विलक्षण सम्बन्ध है। इस कविता से जुड़े हुए कवियों के काव्य संसार में व्यक्त कविताओं से राजनीति के बारे में उसकी तटस्थता और प्रतिबद्धता खुलकर सामने आयी है। क्योंकि इन दो में से एक का चुनाव आव यक है। यह एक सच नहीं हो सकता है कि कवि राजनीति की यर्त्सना भी करें और उनके लिए नारे और पोस्टर लिखने में मद्द भी करें। अतः समकालीन कवियों ने प्रतिबद्धता का रास्ता अपनाया है और सीधे–सीधे राजनीतिक घटनाओं के प्रति अपनी असहमति जताते हुए कविताएं लिखी है जैसे कि भमिल की नक्सबाड़ी कविता में राजनीतिक व्यंग्य देखिए–

सहमति
नहीं, यह समकालीन भाब्द नहीं है
इसे बालिशों के बीच चालू मत करो
जंगल से जिरह करने के बाद उसके साथियों ने उसे समझाया कि भूख
का इलाज नींद के पास है।[3]

Copyright © 2022, Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies

तात्पर्य यह है कि समकालीन कविता को किसी वाद में घसीटने का प्रयत्न न करके उसे संवेदना और धड़कनों की सही पकड़ की कविता कहें तो ज्यादा उचित होगा। इसी प्रयत्न में समकालीन कविता विपक्ष की कविता बन गयी है। रोहिताख का कहना है कि– 'वर्ग विभक्त समाज में 'साहित्य और राजनीति के अत्यधिक सन्दर्भो से कोई भी सजग विद्वान इनकार नहीं कर सकता है। तटस्थता का ढोंग रचाने वालों की तटस्थता की राजनीति भी एक राजनीति वि ोश का अंग होती है। राजनीति दो विपरीत ध्रुवों भोशक व भोशित वर्गो की परिचालित स्थिति होती है, जबकि विचारधारा मन पर पड़ा हुआ जीवन का प्रतिबिम्ब होती है, जिसके जरिये मनुश्य चीजों को न केवल समझता है, बल्कि उन्हें बदलने की भी सोचता है।'[(4)] समकालीन कवि तटस्थता की राजनीति न अपनाकर उन पर व्यंग्य करता है, उसके बने बनाये ढांचे के खोखलेपन को व्यक्त कर भीघ्र परिवर्तन की मांग करता है। समकालीन कवि विद्रपता को पहचानते हैं और व्यंग्य करते हैं। धूमिल की कविता 'बीस साल बाद' का वह विवेचन देखिए–

बीस साल बाद और इस भाहर में
सुनसान गलियों में चोरो की तरह गुजरते हुए
अपने आप से सवाल करता हूँ.........
क्या आजादी सिर्फ तीन थके हुए रंगों का नाम है,
जिन्हें एक पहिया ढोता है,
या इसका कोई खास मतलब होता है।[(5)]

इसी प्रकार के कुछ सवाल अब्दुल विस्मिलाह भी करते है कि राजनीति में परिवर्तन होता है लेकिन आम आदमी की स्थिति में कोई परिवर्तन नहीं होता है। हर साल योजनाएं बनती हैं, बजट बनाये जाते हैं लेकिन उनका लाभ गरीब जनता को नहीं मिल पाता है। 'ढोर कविता में कुछ इस तरह व्यंग्य किया गया है–

लेकिन ढोर का क्या है,
यह 1975 में भी खली खा रहा था
1977 में भी खली खाता रहा है
अब भी वही खा रहा है।[(6)]

वस्तुतः राजनीतिक विसंगतियों ने ही समकालीन कवियों को व्यंग्य मूलक कविताएं लिखने को प्रेरित किया हैं हिन्दी कविता में इसके कई रूप देखने को मिलते हैं नेताओं की गलत राजनीति समाजसेवा व समाज सुधार के नाम पर ठगी कवियों के मन में निरन्तर आक्रोश पैदा करती है। आज का संसद भवन वह संसद भवन नहीं है जो जनता के लिए है और जिसमें जनता की वास्तविक

Copyright © 2022, Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies

समस्याओं पर विचार किया जाता है। धूमिल ने इस निश्क्रियता को उजागर करते हुए व्यंग्य के स्वर में लिखा है–

एक आदमी
रोटी बेलता है
एक आदमी रोटी खाता है
एक तीसरा आदमी भी है
जो न रोटी बेलता है, न रोटी खाता है
वह सिर्फ रोटी से खेलता है
मैं पूछता हूँ
यह तीसरा आदमी कौन है?
मेरे देश की संसद मौन है।(7)

सच्चाई तो यह है कि संसद के पास सामान्य आदमी की किसी भी समस्या का कोई भी जवाब नहीं है। संसद के जिस रूप की परिकल्पना की गई थी, वह स्वार्थ प्रेरित और पूंजीवादी राजनीति का शिकार हो गई। आज संसद भवन में बैठे हुए लोग अपनी हरकतों से करोड़–करोड़ जनता को किस बर्बरता पूर्वक कुचल रहे हैं। उदय प्रकाश व्यंग्यपूर्वक कहते हैं–

राज्य सत्ता
अस्सी प्रति ात लोगों की आँख में
बूट और बारूद की सत्ता है,
पॉच प्रतिशत लोगों के हाथ में
मन माना राज्य
और बाकी हम जैसों के दिमाग में
राज्य सत्ता।(8)

वास्तव में राज्य सत्ता और उसमें बैठे हुए लोगों की नैतिकता जितनी गिरती गई, उतनी ही व्यंग्य का निशाना बनती गई। यही कारण है कि धूमिल जनतंत्र को मदारी की भाशा कहते है, जिसकी कोई अर्थवत्ता नहीं जो अपनी सार्थकता खो चुका है। उसकी रोज हत्या होती है और अगर कहीं वह जिन्दा है तो केवल भेड़िये की जुबान पर। कहाँ कि नैतिकता और कैसी नैतिक संवेदना। संवेदना का लोप आज के चरित्र की सबसे बड़ी दुर्घटना कही जा सकती है। हमारे देश के नेताओं का ध्यान कुर्सी और स्वार्थ पर अधिक है। उनकी अपुश्ट नीतियों और भ्रश्टाचार का परिणाम जनता को भुगतना पड़ता है। भोशक राजनीतिज्ञों के कुचक्र और अपराधों ने यदि जनता को परेशान कर रखा है तो उनके छुट

Copyright © 2022, Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies

भैय भी कुछ कम नहीं हैं सोम दत्त की कविता ''बंदर बांट'' के सिलसिले में समदरशी' को छुटभैये की सलाह में व्यंग्य की धार इस प्रकार प्रकट हुई है–

भाई जी
उसका कलेजा आप रख ले, उसमें ज्यादा गूदा है
मेरा काम इस मझोले से चल जायेगा।
साहब जी,
आप चाहें तो भेजा रख लें उस बड़ा का
छोटा बाँट दें अपने मातहतों में
चाहे बेटों, दामादों, बिटियों, बहुओं में
और पहलवान
तुम गुर्दे कपूरे रख लो, समेट लो सारे अपने अंगोंछे में
चाहो तो पूरा पचा जाओ
या बांट के अपने दायों बायों को दम का जहूरा दिखलाओं।(9)

इस प्रकार घिनौनी एवं विकृत राजनीति का सबसे अधिक यथार्थवादी व्यंग्यात्मक चित्र और क्या हो सकता है? भारत की भूखी जनता ही तो गिरोहबन्द राजनीतिज्ञों, भाोशकों की पूंजी है। इन्हीं का मतपत्र इस्तेमाल करते हुए वे सत्ता के मादक सिहांसन पर चढ़े हुए हैं। राजनीतिक अपने सुविधा भोगी जीवन में खोये हुए हैं। भ्रश्टाचार के नये–नये काण्ड होते जा रहे हैं। जब साधारण तमाम तरह की परेशानियाँ उठाता हुआ अपमानित होता हुआ असमय काल कवलित हो रहा है। आज के इस संवेदन भाून्य समाज में कवि की व्याकुलता अपनी चरम सीमा पर है। आज की परिस्थितियाँ उनके अन्दर बेकसी और बेचैनी पैदा करती हैं। यह भीतरी बेचैनी एक खास भाव सृश्टि है जो सामाजिक दबाव से पैदा हुई है। लीलाधर जगूड़ी की कविता में व्यंग्य इस प्रकार उभरा है–

अच्छा लगता है पत्तों का अव ा झरना?
अंधेरे में क्वांरी कोखों का भरना?
राशनी की नयी–नयी टहनियों पर
स्याह पंछी का बैठना?
अच्छा लगता है एक मरे हुए सांप को लेकर बीन का बजना?(10)

आज की बिगड़ी हुई राजनीतिक व्यवस्था में व्यक्ति ने अपनी जिन्दगी को जैसे दे ा के सत्ताधीशों के हाथ गिरवी रख दिया है। उसका अपनी निजता पर कोई अधिकार ही नहीं रह गया है। इस विडम्बना पर सोमदत्त कहते है कि कुछ ऐसा करूँ कि अपनी जिन्दगी पर मुझे हक मलिकाना मिल जाये।' इस कविता में आज के संवेदन भाून्य समाज में कवि की परवशता और सार्थकता के सवाल

Copyright © 2022, Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies

बेचैनी–परेशानी पैदा करते हैं। वस्तुतः यह सवाल सिर्फ कवि का नहीं पूरे समाज का है। यह भीतरी बेचैनी एक खास भाव सृश्टि है जो सामाजिक दबावों से पैदा होने वाले उहापोह, वैचारिक अर्न्तद्वन्द्व और उसके बाद अपनी सीमाओं में निर्णायक मुद्रा अख्तियार कर लेती है। अरूण कमल लिखते हैं–

यह अनाज जो बदल रक्त में
टहल रहा है तन कोने कोने
यह कमीज जो दाल बनी है
बरिश सरदी लू में
सब उधार का मांगा था
नमक, तेल, हींग, हल्दी तक
सब कर्जे का
यह भारीर भी उनका बंधक
अपना क्या है, इस जीवन में
सब तो लिया उधार
सारा लोहा उन लोगों का
अपनी केवल धार।'[11]

जनता के पक्ष में अरूण कमल की यह रचना बहुत ही आत्मीय है। समकालीन कवि जनता की अनुभूतियों को धारधार करते हैं, क्योंकि उनमें एक स्पश्ट दृश्टि है, तथा विसंगतियों से लड़ने की जीवट आस्था है। अपनी रचना में उन्होंने जिज्ञासा, असन्तोश व बेचैनी के सवालों को बड़ी सावधानी से उठाया है। वे तंत्र या व्यवस्था के प्रश्नों से घिरने वाले 'बयान' का मूल्य जानते हैं। अराजनीतिक भाब्दावली में राजनीतिक आशयों वाली कविता लिखी जा सकती है, इसे उन्होंने अब तक प्रमाणित किया है। उदय प्रकाश को अपने चातुर्विक व्याप्त परिवश से यह अनुभव प्राप्त हुआ है कि– मुक्ति के रास्ते अकेले नहीं मिलते, हाल–चाल कविता का एक उदाहरण देखिए–

ये अकेले का सफर नहीं है
जीवन दास
तुम अपनी साइकिल के
अनोखे सवार नहीं हो।[12]

ऐसे सफर तय करने की मजबूरी में जहाँ व्यवस्था का हाथ है, वहीं जनता का भी कम नहीं। हमारे यहाँ के नेता इसी अबोधता को भुनाते हैं। वे जानते हैं क्रांति यहाँ की जनता के लिए खिलौना है, वह इसे ले तो लेगी लेकिन कारगर ढंग से सम्पादित नहीं कर पायेगी, हालांकि यह भद्र भाशा खटकती

Copyright © 2022, Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies

है कभी–कभी परन्तु वे भाायद परिस्थितियों को बेपर्दा करना चाहते हैं तभी भदेस भाशा का प्रयोग करते हुए, धूमिल कहते हैं–

क्रांति
किसी अबोध बच्चे के
हाथों की जूती है।(13)

यहाँ के नेता यह समझते हैं कि भेड़ की तरह दिखने वाली जनता जिसकी सारी आव यकताएं भी पूरी नहीं हो पाती है, वह क्रांति क्या करेगी, अब्दुल विस्मिल्ला कहते हैं कि ढोर जिसकी संख्या ही मजबूरी होती है, लेकिन कभी–कभी यह शक्ति भी बन जाती है– खली खाने वाला/ इनकी निगाह में/शायद क्रांति नहीं कर सकता। देश को चलाने वाले ठेकेदार हमारे राजनीतिक सत्ता के नशे में इतने बेखबर है कि उन्हें इस बात का पता नहीं कि कवि के भीतर मनुश्य समाज के बदलते हुए यथार्थ को समझने की वैज्ञानिक संवेदना होती है। रघुवीर सहाय की कविता संग्रह 'हंसों हंसों जल्दी हंसों के बारे में बात करते हुए 'कवि का अकेलापन' में मंगलेश डबराल लिखते हैं– 'उनकी एक कविता– 'आनेवाला खतरा' में एक ऐसे आगामी समय का वर्णन है जब चारों और औरतों–मर्दो के खाने–पीने के फूहड आयोजन होंगे, किसी के पास कोई विचार नहीं होगा, क्रोध होगा, लेकिन कहीं क्रोध होगा, लेकिन कहीं विरोध नहीं होगा, सिर्फ अर्जिया लिखी जायेंगी और तब एक खतरा होगा और इस खतरे की घंटी को और कोई नहीं बादशाह ही बनायेगा''

यह कविता सन् 1974 में लिखी गई थी, जब बिहार और करीब–करीब पूरे भारतीय समाज में जबरदस्त संघर्श चल रहा था और भाासक समुदाय पैसे, आतंक और सेंसरशिप के नये तरीके ढूंढने में लगा था। इसके बाद सभी जानते हैं कि इन्दिरा गांधी के हाथों खतरे की घंटी बजाकर देश में इमरजेन्सी आई जिसकी चेतावनी रघुवीर सहाय की यह कविता सालभर पहले दे चुकी थी।'' आज का समय बता रहा है कि साधारण और ईमानदार आदमी के लिए कितनी लज्जा और पराजय का युग है। रघुवीर सहाय ये मानते थे कि आने वाले खतरों के सामने दो ही चीजें टिकी रहेंगी एक चाटुकारिता न करने वाली आदत और दूसरी स्वाभिमान से भरी निर्धनता। कविता में यह राजनीतिक व्यंग्य इस प्रकार उभरा है–

इस लज्जित और पराजित युग में
कहीं से ले आओ वह दिमाग
जो खुशामद आदतन नहीं करता
कहीं से जे आओ वह निर्धनता
जो अपने बदले में कुछ नहीं मांगती
खतरा होगा खतरे की घंटी होगी
और उसे बादशाह बजायेगा।(14)

Copyright © 2022, Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies

रघुवीर सहाय की कविता जीवन से जूझने से उत्पन्न कविता है। वे राजनीतिक विद्रुपता, क्रूरता और अमानवीयता से कतराते नहीं बल्कि कमियों का अध्ययन करते हुए उनसे जूझने के लिए कमर कसर तैयार हो जाते हैं। वस्तुतः आज का राजनैतिक जीवन खतरनाक और अनजाने भय से सदैव ही भयभीत है। फिर भी कविता हमेशा मुकाबले के लिए तैयार हैं। लीलाधर मडलोई व्यंग्य करते हुए लिखते हैं–

मधुमक्खियॉ तैयार/करती हैं भाहद
और करती हैं रक्षा/ बाहरी आक्रमण से उसकी
घिरे हुए हैं हम अनेक दश्मनों से/ और रक्षा नहीं कर पाते
हमने मधुमक्खियों से सीखा नहीं यह मंत्र।'(15)

इस प्रकार समकालीन कविता प्रतिबद्ध कविता है, वह सदा जनता के साथ है। वह अपनी सीमा तक कोशिश करती है। वह चेतावनी देती है, पर वह जानती है कि वह अपनी प्रतिबद्धता में कितनी देर सुरक्षित है–

वक्त बहुत कम है
इसलिए कविता पर बहस
भाुरू करो
और भाहर को अपनी ओर झुका लो
क्योंकि असली अपराधी का
नाम लेने के लिए
कविता सिर्फ इतनी ही देर सुरक्षित है
जितनी देर कीमा होने से पहले
कसाई के ठीहे और तनी हुई गंड़ासे के बीच
बोटी सुरक्षित है।'(16)

इस प्रकार समकालीन कविता में राजनीतिक परक व्यंग्य के विविध रूप परिलक्षित होते हैं। परन्तु मुख्यतया उसमें दो तरह की विशिश्टताएं पाई जाती हैं– एक स्थूल संवेदना और दूसरी सूक्ष्म संवेदना। स्थूल संवेदना के रूप में कवि ने नेता, मंत्री, धनिक वर्ग, सुविधा भोगी अकसर कला के क्षेत्र में दिखावा पसंद आधे पहुँचे हुए लोग तथा सम्मान पाने के लिए साहित्य लिखने वाले लोगों पर व्यंग्य किया है। सूक्ष्म संवेदना के स्तर पर कवि ने पुश्पतंत्र के समूचे चरित्र को उभारा है। सुविधाभोगी मानसिकता नैतिकता का ह्रास चारित्रिक पतन आदि उसके मुख्य अभिलक्षण हैं। इस प्रकार समकालीन कविता में राजनीति का चेहरा खुलकर उजागर हुआ है। वस्तुतः समकालीन हिन्दी कविता में चित्रित राजनीतिपरक व्यंग्य अत्यन्त कटाक्षपूर्ण और गम्भीर हस्तक्षेप के रूप में विद्यमान है। समकालीन कवि

Copyright © 2022, Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies

अपनी राजनीतिक कविता में खोखली और यथार्थवादी स्थिति से आम आदमी को रूबरू करवाता है। वह राजनीति पर व्यंग्य करता है जिससे व्यवस्था के प्रति सबका विशेश रूप से ध्यान आकर्शित हो सके। इस तरह समकालीन कविता में राजनीतिक व्यंग्य युग सन्दर्भ के साथ चित्रित किया गया है जो प्रत्येक युग में प्रसांगिकता को सिद्ध करता है।

सन्दर्भ

मुक्तिबोध रचनावली– सं0 नैमिचन्द्र जैन पृ0 238
नयी कविता की भूमिका– डॉ0 प्रेम भांकर पृ0 55
संसद से सड़क तक– धूमिल पृ0 66
समकालीन कविताः मार्क्सवादी सौन्दर्य शास्त्र के परिप्रेक्ष्य में– रोहिता व, पृ0 144
संसद के सड़क तक– धूमिल पृ0 10
छोटे बुतों का बयान–अब्दुल बिस्मिल्लाह पु0 39
कल सुनना मुझे– धुमिल पृ0 33
अबूतर–कबूतर– उदय प्रका I – पृ0 64
पुरखों की कोठर से – सोमदत्त पृ0 34–35
नाटक जारी है– लीलाधर जगूड़ी पृ0 10
अपनी केवल धार– अरूण कमल पृ0 79
सुनो कारीगर– उदय प्रका I पृ0 26
संसद से सड़क तक – धूमिल पृ0 52
प्रतिनिधि कविताएं– सं0 डॉ0 नामवर सिंह प0 116
पचास कविताएं – लीलाधर मंडलोई पृ0 29
संसद से सड़क तक– धूमिल पृ0 86

Copyright © 2022, Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies